International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 6; November 2018; Page No. 16-20

स्वातंत्रोत्तर युग एवं सामाजिक चेतना

डॉ. एन. लावण्या
प्राध्यापिका, एतिराज कॉलेज फॉर विमेन, चेन्नै, तमिलनाडु, भारत।

प्रस्तावना

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्वतंत्र भारत के नवनिर्माण की बागडोर कांग्रेस नेताओं के हाथ में आई। ये नेता भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में यदा कदा जेलों में जाते रहे थे। शैक्षिक दृष्टि से ये अर्द्धशिक्षित ही थे। आज़ादी के पश्चात सामाजिक क्रांति की पूर्ण संभावना थी। इन नेताओं ने भी देश की उन्नति के लिए लंबे चौड़े वक्तव्य प्रसारित किये। इसका परिणाम यह हुआ कि देश भर में भ्रष्टाचार पनपने लगा। भाई-भतीजावाद, जातिवाद और प्रांतवाद की भावना के आधार पर नेताओं ने कार्य करना आरंभ कर दिया। इससे पूँजीवाद को बढ़ावा मिला। निम्न वर्ग जिसमें किसान और मजदूरों का आधिक्य होता है। पूँजीवाद की चक्की में पिसने लगा। समाज की स्थिति निरंतर दयनीय होती गयी।

अपने भरण पोषण के लिए कार्यालयों में कल्र्क ने, विद्यालयों में शिक्षक ने नगरपालिका में छोटे कर्मचारी ने, तहसील में पटवारी से लेकर तहसीलदार तक ने, गाँव में पंच से लेकर मेजिस्ट्रेट तक ने और पुलिस में चौकीदार से लेकर एस.पी. आदि तक ने रिश्वत लेना आंरभ कर दिया। इससे समाज की दुरावस्था हो गई। साधारण वर्ग के लिए शिक्षा और बुद्धि का भी कोई औचित्य नहीं रहा, क्योंकि इस वर्ग के पास अच्छी शिक्षा और बुद्धि होते हुए भी धनाभाव रहा है। देश की राजनीति पर इसी नेता वर्ग का पूर्ण अधिकार हो गया। धरती, धन शक्ति संपदा और प्रतिष्ठा, इसी तथाकथित वर्ग की स्थाई पूँजी बन गई। सार्वजनिक पदों पर इसी नेता वर्ग के व्यक्तियों की नियुक्ति होने लगी। धन देकर पौधों की बिक्री हुई। परिणाम यह हुआ कि हर दिशा में आपाधापी, लूट खसोट और अराजकता फैलने लगी। गाँव, कस्बा, तहसील, जिला, प्रांत और देशीय स्तरों पर स्वार्थवादी – 'मैं और मेरा' की भावना भर गयी।

कमलेश्वर ने 'नई कहानी की भूमिका' में स्वतंत्रता के पश्चात के समाज का चित्रण करते हुए लिखा है ''चारों तरफ चाटुकारिता, भाई-भतीजावाद, रिश्वतखोरी, कालाबाजार, विसंगति और भीड है, जिसमें उसका अपना अस्तित्व नग्ण्य हो गया है और उसकी मुद्रा है कि कुछ भी करने से कुछ भी नहीं हो सकता।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सामाजिक संबंधों के इटने का जो दौर चला वह रुका ही नहीं और तेज होता गया। पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहिन, माँ-बेटा, बाप-बेटा, प्रेमी-प्रेमिका आदि के संबंध एक झटके से टूटने लगे। जहाँ समाज का विघटन हुआ है और पुरानी मान्यताएँ टूट रही हैं, वहीं नवीन संबंधों का भी निर्माण हुआ है। नारी-समाज में भी चेतना आयी है। अब नारी चूल्हे और घर की चार दीवारी से मुक्त होकर स्वतंत्र हो गई है। बाल विवाह की प्रथा अब समाप्ति की ओर है। विधवा नारी पुरुष सदृश अब पुनर्विवाह भी करती है। समाज में छुआछूत की भावना भी निरंतर समाधि की ओर है। इस प्रकार स्वतंत्रता के बाद यद्यपि सामाजिक क्रांति हुई है, किंतु समाज का विघटन अधिक हुआ है। जिसके कारण आज व्यक्ति में कुण्ठा, निराशा, घुटन, वेदना, व्यथा और संत्रास की भावना जन्म लेती जा रही है।

किंतु दूसरी ओर सामाजिक क्रांति के कारण प्राचीन रूढ़ियों, बाल विवाह, जातिभेद, मतभेद, दहेज प्रथा, पूँजीवाद, जमींदारी प्रथा और अंधविश्वासों का घोर विरोध भी हुआ है। चूँकि भारत कृषि प्रधान देश है यहाँ की अस्सी प्रतिशत जनता कृषि पर निर्भर है और यह किसान वर्ग ग्रामों में रहकर अपनी जीविका चला रहा है। यह वर्ग ग्रामों में रहकर कृषि वस्तुओं का उत्पादन तो करता है किंतु भारतीय अनाज प्रणाली दूषित होने के कारण बेचारे किसान के पास, जो कि पूरे देश का अन्नदाता है, वर्ष पर्यन्त पेट भरने को अनाज ही नहीं बचा पाता है। अत: इस वर्ग की बड़ी ही विषयम स्थिति हो गई है। अत: पूरे समाज में वर्षा पर्यन्त आये दिन हिंसा, मारकाट, लूट खसोट और विद्रोह की खबरें ही सुनने और देखने को मिलती है। भारतीय समाज में अब शांति दूर भागती जा रही है। पूरा देश तोड़ फोड़, भ्रष्टाचार, विद्रोह, हिंसा तथा परस्पर अविश्वास के सर्वनाशी कगार पर आ खड़ा हुआ है। ऐसी ही स्वातंत्रयोत्तर समाज में नये कहानीकारों की पीढ़ी आरंभ हुई है। यह वही प्रतिभा संपन्न नई युवा पीढ़ी थी जिसने विभाजन के पश्चात की युद्ध विभीषिका, हत्याओं, आगजनी, पलायन, निरशा, व्यथा दुर्भिक्ष अत्याचार एवं भ्रष्टचार आदि दुष्कृत्यों को अपनी आँखों से देखा था। कहानीकारों की यह पीढ़ी, जैसा कि डॉ.सुरेश सिन्हा के शब्दों में 'एक नई परंपरा' का निर्माण करने की दिशा में सर्वाधिक आकुल थी और जब उसने पीछे मुडकर देखा तो 'नीलम देश' की राज कन्या (जैनेन्द्र) की पाजेब (जैनेन्द्र) खोजी जा रही थी या डायरी के नीरस पृष्ठों (इलाचंद्रजोशी) में पठार की धीरण (अज्ञेय) कल्पित किया जा रहा था। एक दूसरा तबका भी इन कथाकारों का था, जो 'फूलों का कुर्ता' (यशपाल) पहनकर 'इतिहास' (अमृतराय) लिखने में संलग्न था और ऊबाल (उपेन्द्रनाथ अश्क) आने पर पगोडा वृक्ष (अज्ञेय) के नीचे बैठा हीलीबोन की बत्तखों (अज्ञेय) का नाटक देख रहा था। ऐसे समय में देश, समाज और आस्थाओं के टूटने के कारण फैली हुई निराशा तथा कुंठा से ग्रस्त नई पीढ़ी दिशाहारा की भांति भटक रही थी। उसके दिल में तूफान उमड रहे थे। वह तूफान कहानीकार हो जाने का नहीं जिंदगी को रु-ब-रु देख सकने को था और कितना विलक्षण सत्य था यह कि उसी समय अलग-अलग जगहों पर अपनी जदिगी को झेलते भारतीय मध्य वर्ग के युवक लेखक अपने और अपने समय के सत्य को रु-ब-रु देखकर साहित्यिक प्रतिभा की रचना को नई कहानी का नाम मिला।

नई कहानी की उपलब्धि पर यदि संक्षेप में प्रकाश डाला जाए तो कहा जा सकता है कि जीते जागते व्यक्ति की खोज, फार्मूलों का बहिष्कार, नए अंचलों की तलाश, युग जीवन का स्पंदन, अनुभूति की प्रामाणिकता, समष्टित पीड़ा का व्यक्ति के स्तर पर अंकन, यौन चेतना की अभिव्यक्ति तथा यथार्थ के प्रति प्रतिबद्धता आदि कुछ ऐसे बिंदु हैं जिनके आधार पर स्वाभाविक और अनिवार्य आवश्यकता के रूप में पूर्ववर्ती कहानी से हटकर, पाँचवे दशक के समापन पर नई कहानी जैसी सार्थक संज्ञा खोजी गई।

स्वातंत्रयोत्तर भारत में परिवर्तन का दौर अपेक्षाकृत नगरीय जीवन में तेजी से चला और अधिकांश कहानीकारों ने सामाजिक और भावात्मक विविध संचेतना को अपनी रचना का प्रतिपाद्य बनाया। शहर का यथार्थ ग्राम-जीवन की अपेक्षा अधिक भयावह है। शहरी यथार्थ का एहसास कराने के लिए तटस्थ और निमर्म दृष्टि जरूरी है जो नगर जीवन और नगर संस्कृति की विविध प्रक्रियाओं की गहरी समझ और बोध पर आधृत हो। इस समझ और बोध के नगरीय जीवन की विभिन्न धरातलों पर अभिव्यक्ति देनेवाले प्रतिनिधि कहानीकार हैं – राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, धर्मवीर भारती, भीष्म साहनी, हरिशंकर परसाई, उषा प्रियंवदा, मन्नु भण्डारी, ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह आदि।

इन रचनाकारों की कहानियों में स्वातंत्रयोत्तर नगरीय जीवन में व्याप्त विसंगतियों को अभिव्यक्ति मिली। आधुनिकता, बनावटीपन काम की उग्रमूख, कालेराजेगार, जीवन मूल्यों में तीव्र परिवर्तन परंपरा मुक्ति की उत्कृष्ट कामना, प्राचीनता और नवीनता की संघर्ष क्षण बोध, अनास्था, हताशा, निराशा, भीड़ में अकेलेपन का अहसास, अजनबीपन, स्त्री पुरुष का जूझना आदि समस्त नगरीय जीवन विसंगतियों का इन रचनाकारों ने कभी व्यंग्य के स्तर पर तो कभी तटस्थ भाव से परखने और वाणी देने की सफल कोशिश की है। राजेंद्र यादव का नाम इन रचनाकारों में अग्रेणी है। स्वयं यादव ने अपनी कहानी 'खेल खिलौने' से नयी कहानी का प्रारंभ माना है। अपनी पुस्तक कहानी स्वरूप और संवेदना में वे लिखते हैं – ''हम लोगों ने (मोहन राकेश, कमलेश्वर, यादव) सन् 50 के आसपास लिखना शुरू किया और कहानी तथा जीवन को लेकर वैचारिक हलचलें 1954-55 से शुरू होने लगी थी। यादव में प्रारंभ में प्रगतिशील दिखाई देते हैं। किंतु बाद में वे सामाजिक दायरे को समझकर सामाजिक विसंगतियों को अपनी कहानियों का विषय बनाकर चले हैं।'' इनकी नगरीय बोध की अधिकांश कहानियों में संबंधों की टूटन का यथार्थ चित्रण है।

'उखड़े हुए लोग', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'टूटना', 'अभिमन्यु की आत्महत्या', 'खेल खिलौने' आदि उनकी इसी संवेदना की कहानियाँ हैं। नयी कहानी के दौर मैं जिन रचनाकारों ने समूचे परिप्रेक्ष्य को गैरे रोमान्टिक नजरिये से देखा उनमें राजेंद्र यादव का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यादव मूलत: वैयक्तिक मूल्यों के कहानीकार है। उनके खेल खिलौने में महत्वकांक्षा प्रतिभा से संपन्न दमघोट वातावरण में न जी पाने की त्रासदी से गुप्त रहे व्यक्ति की कहानी है। 'अभिमन्यु की आत्महत्या' पारिवारिक तनाव को झेलने में असमर्थ आत्महत्या की बात सोचने को विवश व्यक्ति की प्रतीकात्मक कहानी है। राजेंद्र यादव का कथा संसार संकुचित नहीं है। उनकी लंचटाइम और बिरादरी बाहर जैसी कहानियों में पुरातन मूल्यों के टूटने का चित्रण है।

मोहन राकेश सामाजिक संचेतना के प्रमुख कहानीकार हैं। उनकी मनोरचना मध्यवर्गीय है। राकेश की कहानियों में नवीन संदर्भा की तलाश है। उन्होंने मध्यवर्गीय समाज की अतृप्ति, प्रदर्शन तथा खोखलेपन, मिथ्या आडंबर को अपनी कहानियों का विषय बनाया। उनकी कहानियों के पात्र तनाव की स्थितियों से ग्रस्त होते हैं। उनकी 'मिस पाल', 'पाँचवे माले का फ्लैट', 'एक ठहरा हुआ चाकू', 'जख्म', 'सुहागिन', 'एक और जिंदगी' 'सीमाजं', 'उसकी रोटी' ऐसी ही कहानियाँ है। इन कहानियों में मध्य और निम्न वर्गों की कुण्ठा, निराशा, अकुलाहर पीडा, अभावग्रस्त स्थिति, पतितावस्था, विवशता आदि का चित्रण अधिक गहनता एवं मार्मिक के साथ हुआ है। राकेश की दांपात्य जीवन की विसंगतियों को उजागर करनेवाली कहानियाँ इस बात का सशक्त प्रमाण है जहाँ उन्होंने 'मल का मालिक' जैसी टूटते मूल्यों को आधार बनाकर कहानियाँ लिखी वहीं वर्तमान व्यवस्था पर करार व्यंग्य करनेवाली 'परमात्मा का कुत्ता' जैसी कहानियाँ। राकेश अपनी कहानियों में प्रेम, साहचर्य भावना बंधुत्व, न्याय एवं सौंदर्य, मानव समान्ता आदि मूल्यों की स्थापना का आग्रह लेकर चले हैं। उनकी कुछ कहानियाँ व्यतीत कथा के निकट प्रतीत होती हैं और कुछ अत्याधुनिक। उनकी सेक्स संवेदना पर आधारित 'सेपटीपिन', 'गुनाहे बे लज्जत', 'वासना की छाया में', 'उर्मिल जीवन', 'शिकारा आखिरी सामान', 'फटा हुआ जूता' आदि अत्याधुनिक कहानियों की श्रेणी में गिनी ना सकती है।

स्वातंत्रयोत्तर कहानीकारों में नगर बोध के साथ-साथ कस्बाई जीवन परिवेश को अभिव्यक्त देने वाले सर्वाधिक चर्चित कहानीकार हैं कमलेश्वर। उनके 'राजानिश्व सिया' और 'कस्बे का आदमी' संग्रह की अधिकांश कहानियाँ कस्बाई मनोवृत्ति की कहानियाँ हैं। स्वयं कमलेश्वर अपनी कस्बाई मनोवृत्ति की स्वीकृति के बतौर लिखते हैं 'मैं उस छोटे से कस्बे मैनपुरी का आभारी हूँ, जहाँ जनमा और पलकर बड़ा हुआ जहाँ का धूल धक्कड़ और जिंदगी के कोलाहल से भरा-पूरा उदास किंतु मोहक वातावरण मेरी अनुभूतियों को नये नये रंगों में रंगता रहा है।' उनकी कहानी 'मुरदों की दुनिया' में कस्बाई परिवेश का सूक्षम चित्रण देखा जा सकता है। 'आत्मा की आवाज़' कस्बाई नारी जीवन का चित्रण करनेवाली एक सार्थक रचना है तो 'तीन दिन पहले की रात' में परंपरागत संबंधों के आहत होने की कथा है। 'गर्मियों के दिन' चायघर और सीखंचे में कस्बाई जीवन में शहरी प्रभाव के कारण आये परिवर्तन दृष्टव्य है।

कमलेश्वर जब कस्बा छोड़कर नगर में प्रवेश किये तो उनकी कहानियों का बोध भी बदल गया। 'खोई हुई दिशाएँ', 'पीला गुलाब', 'दिल्ली में एक मौत', 'जार्ज पंचम की नाक', 'मांस का दरिया', 'युद्ध', 'दुखों के रास्ते' उनकी बहुचर्चित कहानियाँ हैं। 'खोई हुई दिशाएँ' भीड़ में अकेलेपन की नियति को उजागर करती है जो 'बेकार आदमी' 'दिल्ली में एक मौत' तथा 'दु:खों के रास्ते' टूटते व्यक्ति की कथा की। 'मांस का दरिया' वेश्या जीवन की वास्तविक जिंदगी को उजागर करनेवाली उनकी बहु चर्चित कहानी है।

कमलेश्वर की कस्बाई बोध की कहानियाँ का मूलस्वर मानवीय मूल्यों की स्थापना का है किंतु नगर बोध की कहानियाँ आज की खोखली जिंदगी की विडंबनाओं और विसंगतियों तथा मानवीय संबंधों में आती शिथिलता को उजागर करती है। निर्मल वर्मा रोमानी प्रवृत्ति के कहानीकार हैं। उनकी कहानियों की मूल चेतना महानगरीय है। जहाँ उनकी रोमानी प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए डॉ.लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय लिखते हैं। निर्मल वर्मा उन कथाकारों में हैं जिनके लिए जीवन का अर्थ विदेश प्रवास, शराब और लड़की है, वही डॉ.नामवर सिंह उनकी कहानी 'परिंदे' को नयी कहानी की पहली कृति मानकर इसीसे नयी कहानी की शुरुआत मानते हैं।

प्रेम, सेक्स, घुटन, उदासी, भय आदि विविध आयाम निर्मल वर्मा की

कहानियों में दृष्टिगत होते हैं । उनकी कहानियों में व्यक्तिगत स्थितियों का उपमानवीय संबंधों के सदंर्भ में प्रस्तुत हुआ है । निर्मल की कहानियों में हमें आज के परिवेश के अलगाव, बेगाने पन, एलिनिएशन की एकदम ताजा समझ दिखायी पड़ती है। वे मानव मन की सूक्ष्म अनुभूतियों के सफल चितेरे हैं। यह चित्रण 'दहलीज', 'अंतर' और 'पहाड' कहानियों में दृष्टव्य है । स्त्री-पुरुष संबंधों और सेक्स को लेकर लिखी गयी उनकी कहानियाँ अतिरंजना का शिकार होने के कारण उन पर रेक प्रकार के आक्षेप का कारण भी बनी है । उनकी सर्वाधिक चर्चित कहानी है परिंदे । इसमें उन्होंने परिंदों के माध्यम से प्रेम में इन्तज़ार को ही मानव नियति माना है। कहानी के सारे पात्र एक तरह से परिंदे हैं जो कुछ समय के लिए आये हैं और पुन: उड़क अपने-अपने स्थानों को चले जाएँगे इस प्रतिकात्मक संवेदना को कहानी की नायिका लतिका के माध्यम से सूक्षम यथार्थ अभिव्यक्ति मिली है। कहानी के सभी पात्र अकेलेपन की पीड़ा से त्रस्त हैं । 'जलती झाड़ी', 'परिंदे', 'मायादर्पण', 'लंदन की एक रात', 'लवर्स', 'पिक्चर पोस्टकार्ड', 'सितंबर की एक शाम' निर्मल वर्मा की श्रेष्ठ कहानियाँ कहीं जा सकती हैं । ये कहानियाँ आधुनिक नगरबोध के विविध आयामों को अपने यथार्थ रूप में उजागर करती है। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि निर्मल वर्मा यथास्थिति के रचनाकार हैं।

नवीन जीवन मूल्यों की मानवीय संवेदना आधुनिक परिवेश में बनते बिगड़ते मानव संबंध, सामाजिक चेतना आदि आयाम भारती की कहानियों का मूल स्वर है व्यक्ति और समाज के विविध पक्षों का उद्घाटन उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता है। उनकी सन् 1943 के बंगाल के अकाल जीवन पर लिखी 'मुर्दों का गाँव', 'बच्चे की मृत्यु', 'कमल और गुदें', 'बीमारियाँ', 'कफन चोर' आदि अकाल की भयावह मार्मिक भावभूमि पर आधारित कहानियाँ है। उनकी कहानियाँ के पात्र प्राय: निम्न और मध्य वर्ग के हैं तथा उन्होंने बराबर ही सामाजिक परिधि की यथार्थता को अभिव्यक्ति प्रदान की है। कवि होने के कारण कहानियों में वे अतिशय भावुक नहीं, मात्र संवेदन शील है। प्रारंभ में प्रगतिशील आंदोलनों से जुड़ें भारती आधुनिक सामाजिक संवेदना का रचनाकार हैं । उनकी कहानियों में प्रगतिशीलता की सिद्धांत वादिता नहीं अपितु आस्था विश्वास तथा संघर्षशीलता के दर्शन होते हैं।

सामाजिक बोध आधुनिक परिवेश एवं युगीन सचेतना के कारण भारत की कहानियों में सामाजिक दायित्व बोध एवं निर्वाह की एक व्यापक पृष्ठभूमि प्राप्त होती है जो अपने दूसरे समकालीनों से उन्हें भिन्न करती है । उनमें न राजेंद्र यादव की भांति शिल्पगत चमत्कार है न कमलेश्वर की भांति दूसरों की सफल कहानियों से प्रभावित होने की प्रवृत्ति है और न मोहन राकेश की भांति सामाजिक दायित्व एवं तथा कथित नई काइसिस को नारेबाजी के स्तर पर चित्रित करने का दुराग्रह है।

भीष्मसाहनी मूलत: निम्न मध्य व मध्यवर्गीय जीवन विसंगतियों के चितेरे है। कुण्ठा, घुटन, पीडा, बिखराव, रूढ़ियाँ, झूठी मान्यताएँ, शोषण की विडंबना इनकी कहानियों के प्रतिपाद्य विषय है । 'चीफ की दावत' पहला पाठ, 'भरकती राख', 'पास फेल', 'सिफारिशी चिट्ठी' सुनहरी किरण आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ कहीं जा सकती हैं । 'चीफ की दावत' कहानी प्राचीनता के नकार को व्यंग्यात्मक स्तर पर उभारती है । शामनाथ अपने चीफ के सामने बूढ़ी माँ को नहीं आने देता लेकिन जब स्वयं उसकी माँ से मिलने पहुँच जाता है तो शामनाथ की सारी कलई खुल जाती है, वह हतप्रभ हो जाता है और कहानी में एक मानव मूल्य की स्थापना स्वत: हो जाती है।

भीष्म साहनी प्रगतिशील आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़े स्वतंत्र चेतना के रचनाकार हैं। यहीं कारण है कि वे अपनी कहानियों में पूँजीवाद और शोषण के घोर विरोधी व सर्वहारा वर्ग के पक्षधर हैं। उनकी कहानियों में समाजवादी चेतना को भी सार्थक रूप से देखा जा सकता है। 'भटकती राख' का मूल स्वर यही है। अर्थ किस प्रकार जीवन मूल्य बनता जा रहा है। इस चेतना को उनकी 'खून का रिश्ता' कहानी में बड़े ही मार्मिक ढंग से अभिव्यक्ति मिली है। 'कुछ साल' में संबंधों को भुलाये जाने की स्थिति का चित्रण है तो 'सिफारिशी चिट्ठी' कल्कीं जीवन और व्यवस्था की विडंबना और विसंगतियों को अपनी वास्तविकताओं के साथ उभारती है।

उषा प्रियंवदा समकालीन महिला कहानीकारों में एक सशक्त साहित्यकार हैं। इनकी कहानियाँ आज के पारिवारिक परंपरागत मूल्यों के टूटन की कहानियाँ है । इस संदर्भ में उनकी 'वापसी' एक सार्थक और बहुचर्चित कहानी है । गजाधर बाबू जब तक नौकरी करते है, तब तक सबके चहेते हैं लेकिन रिटायरमेंट के बाद वे घर में फालतू सामान बनकर रह जाते हैं। यहाँ तक कि पत्नी के लिए भी वे परायेपन की सीमा में आ जाते हैं और वर्षों से परिवार के साथ रहने की साघ लिए हताश गजाधर बाबू नौकरी तलाश करने के लिए निकल पड़ते हैं। अर्थ के कारण कैसे मानवीय और आत्मीय संबंध भी कितने शिथिल और निरर्थक बन जाते है।

उनकी 'पेराम्बुलेटर' भी आर्थिक मूल्यों पर आधारित कहानी है । उनकी कहानियों में स्थान-स्थान पर मानवीयता और करुणा के स्वर फूटते जान पड़ते हैं। भावुकता के साथ इनकी कहानियों में वैचारिक गरिमा संयम और गहराई है।

उषा प्रियंवदा की कहानियों में नई परिस्थितियों और उनसे उत्पन्न मानसिक जटिलता की छाया भी है । नारी जीवन की विसंगतियों को उभारने में वे सिद्धहसत है । आज के नारी जीवन में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जो परिवर्तन आज हैं और जिन नए मूल्यों को अस्वीकार करने के लिए आज की नारी बिना सोचे समझे अपनाने के लिए आकुल हो रही है, उसके क्या-क्या परिणाम हुए हैं उषा प्रियंवदा की कहानियों में यह अत्यंत सूक्षमता के साथ मुखरित हुआ है। उनकी कहानियों में कथातत्व प्रबल है और उनमें शिल्पगत बिखराव कहीं नहीं दिखाई देता। भारतीय एवं विदेशी सामाजिक विसंगतियों और मान मूल्यों को समान स्तर पर अनुभव करने तथा अभिव्यक्ति देने वाली वे एक मात्र कथा लेखिका है। 'वापसी', 'कोई नहीं', 'मछलियाँ', 'खुलदरवाजे' तथा 'जिंदगी' और 'गुलाब के फूल' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ हैं।

स्वातंत्रयोत्तर भारतीय समाज और व्यवस्था की विविध विसंगतियों को आधार बनाकर कहानियाँ लिखेनवालों में हरिशंकर परसाई का शीर्ष स्थान है। उनके व्यंग्य जीवन के हर विसंगतिपूर्ण पहलू को छूते हैं जिनमें सूक्षमता और गजब का पैनापन होता है। 'भोलाराम का जीव', 'चावल से हीरे तक', 'तेरा हीरा हेराइगा कचर में', 'पोस्टरी एकता', 'एक बेकार घाव', 'सड़क बन रही है', 'भाइयों और बहिनों', 'निठल्ले की डायरी', 'एक फरिश्ते की कथा' आदि उनकी श्रेष्ठ व्यंग्यात्मक कहानियाँ है । राजनीतिक स्थिति, विज्ञापन, सरकारी भ्रष्टाचार तथा कथित समाज सुधार, देश की कृत्रिम एकता, धार्मिक, सामाजिक रूढ़ियाँ, छदम् और कृत्रिमतापूर्ण जीवन आदि सभी विसंगत और मूल्यहीन आयामों पर उन्होंने अपने धारदार व्यंग्य से करार चोट की है। उनका व्यंग्य मानवीय संवेदना का मार्मिक संस्पर्श लिए होता है।

उनकी भोलाराम का जीव कहानी प्रशासन के ढांचे में व्याप्त लाल फीता शाही, घूसखोरी एवं मानवीय संबंधों की हृदयहीनता को उद्घाटित करती है 'पोस्टरी एकता' पर करार व्यंग्य है भाइयों और बहिनों कहानी में कांग्रेसियों पर

व्यंग्य किया गया है जो की राष्ट्र के विकास का सारा श्रेय अपने को देते हैं और विरोधियों की निंदा करते हैं। 'चावल से हीरे तक', 'तेरा हीना हेराइगा कचरे में' राजनीतिक आपाधापी तथा खोखले और छदम खैदे को उजागार करनेवाली कहानी है। आज के नेता ईमान और आत्म सम्मान की गठरी पीठ पर लादकर विदेशों में फेरी लगाते हैं। 'निठल्ले की डयरी' में नारे तो लगाये जाते हैं। 'इन्क्लाब जिंदाबाद' उजडे घर होंगे आबाद किंतु होता है इसके विपरीत। परसाई की कहानियों की भाषा सहज सरल एवं दुरुहता से रहित होने के कारण आम पाठक के लिए भी सहज बोधगम्य है।

स्वातन्त्रयोत्तर महिला कथाकारों में मन्नू भण्डारी सर्वाधिक ख्याति प्राप्त लेखिका है। उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियों का प्रतिपाद्य नारी जीवन की विसंगतियों व समस्याओं को बनाया है। उन्होंने सामाजिक मूल्यों में आये परिवर्तन के कारण उत्पन्न संघर्ष को पूरी ईमानदारी और सतर्कता के साथ अपनी कहानियों में उभारा है तथा पुरातन संस्कारों के जाल में जकड़ी नारी के स्वतन्त्र व्यक्तित्व को खोजने का साहस भी किया है। उनकी कहानियाँ स्त्री पुरुष संबंधों तक ही सीमित न रहकर वर्तमान युग के सामाजिक आक्रोश, घुटन, हताशा, जीवन की संकुलता आदि को भी व्यंजित करती है। भण्डारी की कहानियों का संवेदनागत फलक घर परिवार की चार दीवारी में ही सीमित न रहकर काफी विस्तृत है।

उनकी 'रानी माँ का चबूतरा' नारी जीवन की पीडाओं, उसकी दयनीय अवस्था को व्यक्त करती है तो 'यह सच है' – प्रेम संबंधों के त्रिकोण को नई दृष्टि से उठानेवाली कहानी है। 'तीसरा आदमी' कहानी भी स्त्री-पुरुष संबंधों को विसंगतियों को उजागर करती है। इस कहानी में नये जमाने के पति की मानसिक कमजोरी का एक पहलू स्पष्ट हुआ है। वस्तुत: सच्चाई कुछ भी नहीं होती, सब शक ही शक होता है उसका भी कोई ठोस आधार नहीं होता पर क्या किया जाय।

'अकेली' कहानी में सामाजिक संबंधों के प्रति लगाव देखा जा सकता है। 'नशा' कहानी में संस्कारों के प्रति आग्रह है और 'सजा' कहानी में टूटने और बिखरने का चित्रण। नारी के सच्चे, रूढिमुक्त या मुक्तिकामी हृदय का स्पंदन, उसका द्वंद्व और वर्तमान परिस्थितियों से विद्रोह की दृष्टि से 'इसा के घर इंसान' उनकी एक महत्वपूर्ण कहानी है। 'पंडितगदाधर शास्त्री' में कृत्रिम सतही लेखकों के अहंकार तथा 'मैं हार गई' कहानी में नेताओं पर व्यंग्य है।

मन्नू भण्डारी अपनी कहानियों में प्रयोगों के प्रति आग्रहशील नहीं दिखायी देती इनकी कहानियाँ सोद्देश्य होती हैं और जीवन के निकट। कहानियों में अनुभूति की गहनता और नये मूल्यों को उभारने की पर्याप्त क्षमता भी। 'यही सच है, 'चश्में', 'कील और कसक', 'ईसा के घर इंसान', 'नशा', 'तीसरा आदमी' उनके कहानीकार की रचनात्मक उपलब्धियाँ हैं।

स्वातन्त्रयोत्तर कहानी में मध्य वर्गीय समाज के संक्रमण के दौर से गुजरने की स्थिति और पुरातन मूलयों की अर्थहीनता का स्वर प्रमुख रहा है। रूढ़ समाज व्यवस्था एवं पारिवारिक संबंधों का विघटन नई पीढ़ी के लिए जटिल समस्याओं का विधायक हुआ है। जीवन की इस अंतरंग व्यथा टूटते जाने की मानसिकता और मानवीय संबंधों को स्पंदित मनोभूमि की सूक्षम पहचान ज्ञानरंजन की कहानियों में देखी जा सकती है। नगर बोध के सक्रांत जीवन की विविध विसंगतियाँ निजी पीडा, पराजय, ऊब, हताशा, आत्महत्या, भीड़ में अकेलेपन का एहसास, प्रेम और यौन संबंधों में शिथिलता और मिसफिर होते हुए युवा वर्ग की मानसिकता ज्ञानरंजन की कहानियों का कुल बोध यही है। 'फेंस के इधर और उधर' दो पडौसियों को लेकर उनमें अजनबीपन की अनुभूति को संश्लिष्ट और प्रतीकात्मक स्तर पर अभिव्यक्ति देनेवाली उनकी प्रभावी रचना है। फेंस के एक ओर पुराना जीवन है और दूसरी ओर नया। उधर समाज का भय नहीं है और इधर डर ही डर है। फेंस केवल पडौसी के अलगाव का प्रतीक भी है। 'शेष होते हुए' परिवार में अजनबी होते जाने और मूल्यों के टूटते जाने की नियती को उद्घाटित करती है तो 'हास्यरस' स्वीकृत संबंधों में आगे प्रश्न चिन्ह लगाकर दाम्पत्य संबंधों की विसंगतियों को उजागर करती है।

उनकी आरंभिक काहनियाँ मुख्यत: प्रेम संबंधों के बिद्रूप और पारिवारिक संबंधों के विघटन का स्वर लिए होती है। इस दृष्टि से 'घंटा' और 'बहिर्गमन' उनकी दो प्रभावशीली रचनाएँ है। ज्ञानरंजन के अपने व्यंग्य संचलित स्वर के किरण जीवन की प्रत्येक कटुता पर निर्मम प्रहार करने में भी सफल हुए हैं। उनकी 'खल नायिका' और 'बारूद के फूल' तथा 'सीमाएँ' आदि कहानियाँ इस बात का सशक्त प्रमाण है।

दूधनाथ की कहानियों का मूल स्वर आत्मपरक प्रवृत्तियों की अभिव्यक्त है। रचना के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए के स्वयं लिखते हैं - ''उद्देश्यहीनता हमारा लक्ष्य नहीं हो सकता। जब हम भागीदारी की बात करते हैं तो तत्काल हम सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों, कठोरताओं और असहनीयताओं में अपने को संलग्न पाई हैं। हमारी संलग्नता हमें उत्तरदायित्व देती है और उसी अनुपात में हमारी कठिनाईयाँ और यंत्रणा की शर्तें भी बढ़ जाती है। मेरा सिर्फ यही कहना है कि समाज का कोई बना बनाया ढांचा नहीं है जिसका यथार्थ या जिसका दबाव या जिसका खोखलापन एक सा है। मैं उस पर भविष्यवाणी नहीं कर सकता, केवल रचना के माध्यम से मैं एक नये ढंग की विश्वासहीनता की ओर बढ़ता हूँ।''[1]

दूधनाथ सिंह की आरंभिक रचनाएँ अपने अधिकांश समकालीनों की भांति मध्यवर्गीय पारिवारिक संबंधों के विघटन की कहानियाँ है। जिनमें 'रक्तपात' और 'आइसवर्ग' प्रभावशील रचनाएँ – 'रीछ' अपने समय की बेहद विवादास्पद और चर्चित कहानी है। 'स्वर्गवासी' में वे इस देश के अकर्मण्य व्यक्ति का मुकम्मल खाका पेश करते हैं तो 'सपाट चहेरे वाला आदमी' में पुरातन मूल्यों और परंपराओं को तोडने का आग्रह है।

ग्राम तथा अंचल बोध की कहानियों की संवेदना में कोई मौलिक अंतर नहीं। अंचल बोध की कहानियों में भी मूलत: ग्राम बोध ही है। अंतर सिर्फ यही है कि कुछ रचनाकारों ने भारतीय ग्राम की सार्वजनीत विसंगतियों को अपनी कहानियों का आधार बनाया, यह भारत के किसी भी कोने का ग्राम हो सकता है। लेकिन कुछ रचनाकारों ने अंचल विशेष के ग्राम बोध को अपनी संपूर्णता में उभारने की चेष्टा की। वे अंचल विशेष की संगत असंगत स्थितियों और संस्कृति को ही समीपित रहे हैं। ऐसे रचनाकारों में 'फणीश्वरनाथ रेणु' का नाम सर्वोपरि है। इनके अतिरिक्त ग्रामांचल बोध को अपनी संपूर्णताओं और वास्तविकताओं सहित उजागर करने में शेखर, जोशी, मार्कण्डेय शिवप्रसाद सिंह के नाम विशेषत: उल्लेखनीय है। इन्होंने अंचल को भी उभारा है और ग्राम बोध की विसंगतियों को भी।

हिंदी कथा साहित्य में फणीश्वरनाथ रेणु एक मात्र ऐसे कथाकार है जिन्होंने सर्वप्रथम अंचल को अपनी संपूर्णता में उभारने का सफल प्रयास किया। मूलत: बिहार अंचल की ग्राम्य संस्कृति सामाजिक विसंगतियों और पात्रों के दु:ख दर्द को मार्मिक धरातल पर अभिव्यक्ति देनेवाले रचनाकारों में नि:संदेह उनका कोई सानी नहीं। उनके परवर्ती अन्य कथाकारों ने ग्राम जीवन पर अनेक कहानियाँ लिखी हैं। लेकिन रेणु का ग्रामांचल अलग किस्म का है।

उनकी कहानियों में अंचल की संस्कृति की भी स्पष्ट और पूर्ण झलक मिलती है । भाषा जनजीवन आदि के स्तर पर भी । 'तीसरे कसम', 'उर्फ मारे गए गुलफाम' रेणु की सर्वाधिक चर्चित और प्रभावशाली कहानी है जो आंचलिक कहानी साहित्य में 'मील के पत्थर समान है' यह सिर्फ प्रेम कहानी नहीं है दो आत्माओं के बिछोह की पीड़ा से अभिभूत सनातन सत्य को भी उजागर करती है। कहानी में हीराबाई के प्रति हीरामन के मन में जो निष्ठा और प्रेम का भाव उत्पन्न हुआ है और तज्जनित प्रभाव से उसमें किस प्रकार की क्रिया प्रतिक्रिया होती है, रेणु ने इसका बड़ा ही सूक्षम और मर्मस्पर्शी चित्रण किया है । रेणु सिर्फ सौंदर्य के चितेरे ही नहीं, उनकी कहानियों में सामाजिक धार्मिक रूढ़ियों को भी अभिव्यक्ति मिली है। 'सिर पंचमी का सगुन', 'काक चरित' उनकी ऐसी ही कहानियाँ है । 'आत्मसाथी' एवं 'जलता कहानियों में राजनीतिक संदर्भ है तो 'आदिम रात्रि की महक' में ग्रामीण अंचल को बिंबों के स्तर पर उभारा गया है। भारतीय संस्कृति के प्रति रेणु का अटूट लगाव था। उनकी 'तीर्थोदक', 'लाल पान की बेगम' आदि भारतीय संस्कृति के विविध आयामों को उद्घाटित करनेवाली कहानियाँ है । अपने अंचल की लोक संस्कृति, भाषा, आचार, व्यवहार, स्थानीय जीवन पद्धति तथा मुहावरे आदि को रेणु ने सूक्षम अंर्तदृष्टि से परखा है और उसे व्यापक सार्वजनीता प्रदान करते हुए अपूर्ण मानवीय संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है।

शेखर जोशी वस्तुत: ग्राम्य परिवेश के सफल चितेरे हैं। जहाँ एक ओर उनहोंने आज की विसंगतियों में टूटते हुए लोगों का चित्रण किया है वहीं दूसरी ओर ग्रामीण जीवन के नये-नये कोणों का अन्वेषण कर प्रेमचंद की परंपरा को आगे बढ़ाया है। जोशी ने समाज के ऐसे अनछूए आयामों को अपनी कहानियों का प्रतिपाद्य बनाया जिनसे कहानीकार अवसर कतराते रहे हैं । डॉ.नामवर सिंह इस संदर्भ में लिखते हैं –''जिंदगी के गहन जंगल में आज भी न जाने कितनी सजीव वस्तुएँ पड़ी हुई है जिनको अभी तक किसी कहानीकार से नाम नहीं मिल सका है, जिन्हें किसी को आँखे नहीं मिल पाई है जो बोल उठने के लिए कहानीकार की वाणी के लिए अभी तक मुहताज हैं।''[2]

'कोसी का घटवार' जोशी की सर्वाधिक चर्चित कहानी है। गुसाई लछमा के प्रेम संबंधों की निश्छल परिणति इस कहानी में अत्यंत मार्मिक ढंग से उजागर हुई है । कहानी का परिवेश ही कहानी को स्वाभाविक प्रतीकात्मकता प्रदान कर उसे मानवीय संवेदना से आपूरित कर देता है। प्रेम की ऐसी सहानुभूति और दायित्व परक व्याख्या अन्यत्र ढूंढने पर भी शायद मिले । 'दाज्यू' भी जोशी की ऐसी ही मार्मिक कहानी है जिसमें मानवीय संबंधों की झुझलानेवाली सभ्यता पर करार व्यंग्य किया गया है।

मार्कण्डेय स्वातन्त्रयोत्तर भारत के ग्रामांचल में हुए परिवर्तनों को अभिव्यक्त देनेवाले समर्थ कहानीकार है । इन्होंने 'ग्रामीण कहानी' का एक अलग आंदोलन आरंभ भी किया किंतु वह अल्पजीवी प्रमाणित हुआ । इनकी कहानियों में ग्राम जीवन के नये-नये संदर्भो तथा वास्तविकताओं के प्रति मार्कण्डेय की निजी प्रतिक्रिया व्यक्त हुई है, जिसके पीछे एक विशिष्ट राजनैतिक और आर्थिक दृष्टिकोण है। आधुनिक ग्राम जीवन और दृष्टिकोण में नये आये हैं। ये गाँव वहीं नहीं जो प्रेमचंद के समय में थे।

स्वयं मार्कण्डेय ग्राम कथा की आवश्यकता और महत्ता पर बल देते हुए कहते हैं –''प्रेमचंद परंपरा की तोड़ती हुई शहरी जीवन पर आधारित कहानियाँ मरणोन्मुखी प्रवृत्ति की ही गई हैं। उससे हिंदी कहानी को उबारने का श्रेय ग्राम कथा को हैं।''[3]

'हंसा जाई अकेला' में लघु मानवहंसा के माध्यम से मानवीय सहानुभूति का यथार्थ और सजीव चित्रण हुआ है। कहानी में कर्मठता और आस्था का स्वर मुखरित होता जान पड़ता हे। उनकी 'आदर्श कुक्कुट ग्रह', 'भूदान' और चाँद का ठुकडा' तथा 'धुन' कहानियों में शोषण की नियति को अपनी वास्तविकताओं के साथ उभारा गया है। 'साबुन' में बेरोजगारी की समस्या को उठाया गया है तो 'माई' में ग्राम जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाली नारी की व्यथा कथा व्यंजित है। ग्राम्य जीवन का एक आयाम 'शकुनापशकुन' भी है और इस खोखली रूढि को मार्कण्डेय ने 'सहज और शुभ' कहानी के माध्यम से निससार घोषित करने का प्रयास किया है। मार्कण्डेय प्रगतिशील चेतना के काहनीकार है और प्राचीन सामाजिक नैतिकता और मूल्यों में उनकी पूर्ण आस्था है। इस प्रकार स्वातन्त्रोत्तर प्रतिनिधि कहानीकारों के चयन में मेरा अपना निजी दृष्टिकोण रहा है कि हर बोध के कुछे मुख्य रचनाकारों को ही लिया जाए। मैं समझती हूँ इन रचनाकार की कहानियाँ स्वातन्त्रयोत्तर हिंदी कहानी को समझने और स्वातन्त्रोत्तर भारतीय समाज में आये परिवर्तनों को रेखांकित करने में सफल और समर्थ हैं ।''नारी के बदलते हई सामाजिक स्थिति के परिणामस्वरूप उसकी उपलब्धियों और समस्याओं तथा टूटते एवं बिखरते स्त्री-पुरुष संबंधों आदि का सूक्षम चित्रण इन कहानियों में हुआ है?''[4] स्त्री पुरुष के यौन संबंधों का जितना यथार्थ एवं सूक्षम मनोवैज्ञानिक चित्रण इस उत्तरार्द्ध की कहानी में हुआ है, वैसा पूर्वार्द्ध के कहानीकारों में नहीं किया । स्वातन्त्रोत्तर युग की कहानी संपूर्ण भारतीय समाज की कहानी है, भारतीय मानवजाती और उसके समूह की कहानी है । वह उस भारत की यथार्थ कहानी है जिसका विश्व में गौरवस्थान रहा है।

संदर्भ

1. धनंजय, समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि, पृ.सं.172।
2. डॉ. नामवर सिंह, कहानी : नयी कहानी, पृ.सं.49।
3. मार्कण्डेय, भूदान, पृ.सं.10।
4. डॉ.माहेन्द्र भटनागर, हिंदी कथा साहित्य विविध आयाम, आत्माराम एण्ड संस।